इकाई 2 वार साधन

इकाई की संरचना

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 वारपरिचय

2.3 वारक्रम

2.4 वारप्रवृत्ति

2.5 वारों की शुभाशुभत्वादि संज्ञा

2.6 सारांश

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 सहायक पाठ्यसामग्री

2.10 बोध प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप,वारों को अच्छे प्रकार से जान सकेंगे।

- वार की उत्पत्ति के विषय में जान सकेंगे।
- वार के इतिहास को जान पायेंगें।
- वार के शुभाशुभादि भेदों से परिचित हो सकेंगें।
- वार क्रम के आधार को समझ सकेंगें।
- वार के सम्पूर्ण मान को जान पायेंगें।
- वारप्रवृत्ति के काल को समझ सकेंगें।

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई स्नातकोत्तर ज्योतिष कार्यक्रम के अन्तर्गत पंचांग एवं मुहूर्त्त नामक तृतीय पाठ्यक्रम के द्वितीय खण्ड की दूसरी इकाई है। जिसका शीर्षक वारसाधन है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने तिथि के सम्पूर्ण स्वरूप के बारे में अध्ययन कर लिया है तथा अब पंचांग के मुख्य अवयव वार के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं। वैसे तो समग्र विश्व वारों से भलीभांति परिचित है क्यों कि विश्व के सभी देशों में इनका नामान्तर से स्व भाषाओं में प्रचलित नामों द्वारा व्यवहार किया जाता है परन्तु इनकी उत्पत्ति, क्रम एवं सिध्दान्त के बारे में प्रायशः लोग अपरिचित हैं। अतः हम इस इकाई के अन्तर्गत इनके आधार भूत सिद्धान्तों का अध्ययन करेगें। इसके अतिरिक्त भारतीय ज्योतिष की ज्ञान परम्परा में वारों का सामान्य व्यवहार के अतिरिक्त धार्मिक आदि क्षेत्रों मे भी विशेष व्यवहार होता है अतः इनके सर्व पक्षीय समग्र ज्ञान से भारतीय ज्योतिष को समझने में सहायता मिलेगी। तथा आपका वार विषयक ज्ञान परिपुष्ट होगा।

2.2 वारपरिचय

वर्तमान समय में भारत ही नहीं अपितु विश्व के समग्र देशों में एक जैसे वारों का ही निर्विवाद स्वरूप में प्रचलन है जिन्हें हम भारत वर्ष में रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरूवार, शुक्रवार एवं शनिवार के नाम से तथा अन्य देशों में उनके अपने देशज पृथक–पृथक नामों से जानते हैं। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से वारों की उत्पत्ति का स्थान, विकास, क्रम तथा स्वीकार्यता अत्यन्त विवादित रही है क्यों कि विश्व की कुछ सभ्यताओं में वारों की संख्या दस तो कुछ में तीस भी रही है परन्तु जिन देशों और सभ्यताओं में वारों की संख्या दस अथवा तीस दिनों की रही है उन्होंने भी अपने व्यवहार एवं गणना में संशोधन करके वारक्रम एवं संख्या को ठीक कर लिया है तथा आज पूरे विश्व में भारतीय ऋषियों द्वारा स्थापित वारक्रम ही स्वीकृत एवं प्रचलित है। यह प्रचलित वारक्रम जिस समय समग्र विश्व में सौरमण्डल की भूकेन्द्रिक कक्षाक्रम से गणना थी लगभग तभी से स्थापित है तथा केप्लर के सूर्यकेन्द्रिक कक्षाक्रम गणना को वैज्ञानिकी स्वीकृति मिलने के बाद भी इस भूकेन्द्रिक ग्रहकक्षा के गणना क्रम में कोइ परिवर्तन किसी रुप में नहीं हुआ तथा वही आज भी वारोत्पत्ति के आधार के रूप में प्रतिष्ठित है। क्यों कि भारतीय गणना परम्परा में सूर्यकेन्द्रिक ग्रह भ्रमण का प्राचीन काल से ही ज्ञान रहते हुए भी भूकेन्द्रिक कक्षाक्रम गणना के अनुसार इस वारक्रम को स्थापित किया गया था तथा पश्चात्य विज्ञानवाद के इस भौतिक युग में भी भारतीय ऋषियों द्वारा निरूपित भूकेन्द्रिक ग्रहों के कक्षाक्रम पर आधारित वारक्रम अपने शाश्वत स्वरुप में गतिशील है। अन्यथा सूर्यकेन्द्रित गणना को आधार बना लेने से 'रविवार' के स्थान पर 'भूवार' या पृथ्वीवार आ जाता तथा सोमवार चन्द्रमा के उपग्रह होने के कारण वारक्रमों से बाहर हो जाता परन्तु वार क्रम का एक सुचिन्तित सिध्दान्त होने के कारण ऐसा नहीं हुआ। अब हम वारों के नामकरण के प्राचीन भारतीय आधार पर विचार करने से पूर्व सर्व प्रथम 'वार' शब्द पर विचार करते हैं।

जैसा कि आप जानते है कि भारतीय ज्योतिषशास्त्र की काल गणना परम्परा में अनेक प्रकार के कालमानों का व्यवहार किया जाता है जिनमें सौर, चान्द्र, नाक्षत्र, सावन, पितृ, दिव्य, गुरू, प्रजापत्य एवं ब्राम्ह दिन सम्बन्धित नव (9) काल मान प्रमुख हैं। इनमें भी वार प्रसंग में मुख्यतया सौर, चान्द्र, नाक्षत्र एवं सावन दिनों का प्रयोग मानव व्यवहार में किया जाता है। जिनमें सूर्य के एक अंश भोग से सौर दिन, एक तिथ्यात्मक चान्द्र दिन, पृथ्वी के अपने अक्ष पर भ्रमण करने में लगे समय के तुल्य नाक्षत्र दिन तथा एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का काल सावन दिन होता है। इन चारों वारों में भी सूर्योदय काल के ज्ञान की सर्व सुलभता से गणना सुगम होने के कारण वार शब्द से सावन दिनों का ही प्रयोग एवं व्यवहार होता है। एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के काल की सावन संज्ञा यज्ञों के सम्बन्ध से उत्पन्न हुई। क्यों कि सोमयाग में एक अहोरात्र के अन्तर्गत सोम के तीन सवन होते हैं इसी लिए कालमाधव में माधवाचार्य ने लिखा है कि

"सावनशब्दोऽहोरात्रोपलक्षकः सोमयागे सवनत्रयस्याहोरात्रसम्पाद्यत्वात्" यहाँ सवन से सम्बन्धित होकर अहोरात्र सावन संज्ञा के रूप में प्रचलित हुआ। जिसका सम्प्रति रविवारादि के नाम से व्यवहार करते हैं। पंचसिध्दान्तिका के पुलस्त्य सिध्दान्त में भी स्पष्टतया प्राप्त होता है कि **"सावनमानेन वाराः सप्तप्रकीर्तिताः"** वारों की प्राचीनता एवं उत्पत्ति स्थान के सन्दर्भ में इतिहासकारों में मतान्तर दिखाई देता है। भारतीय ज्योतिष शास्त्र के सुप्रसिध्द इतिहासकार शंकरबालकृष्ण दीक्षित ने **"भारतीय ज्योतिष"** नामक ग्रन्थ मे वारों की उत्पत्ति की ऐतिहासिक विवेचना करते हुए लिखा है वारों की उत्पत्ति एवं क्रम का आधार ग्रहगति एवं होरा है तथा इन दोनों का विकास भारत में नहीं हुआ है। अतः वार भी भारतीय नहीं है परन्तु वैदिक संहिताओं एवं वेदांग

ज्योतिष के सूक्ष्म अनुशीलन से दीक्षित जी की उपर्युक्त विवेचना युक्ति संगत नहीं प्रतीत होती है, क्योंकि कुछ यूरोपियन एवं अन्य वैदेशिक विद्वानों के वचनों को आधार बनाकर मिस्र, ग्रीक या बेबिलोन अर्थात् खाल्डिया को वारों की उत्पत्ति का स्थान मानते हुए लिखा है कि इन तीनों के आतिरिक्त अन्य कोई स्थान निश्चित रूप से वारों की उत्पत्ति का नहीं है तथा इसके लिए उन्होंने ईसा पू. 100 वर्षों के पूर्व का ही विभिन्न वैदैशिक एवं कम्यूनिस्ट भारतीय इतिहास कारों का साक्ष्य प्रस्तुत किया है जब कि इससे हजारों वर्ष पहले के स्मृति ग्रन्थों एवं वेदांग ज्योतिष के अन्तर्गत अथर्व ज्योतिष में स्पष्ट रूप से वारों के अधिपतियों का नामोल्लेख प्राप्त होता है। यद्यपि वार एवं वासर शब्द यजुर्वेद संहिता सहित ब्राह्मण एवं आरण्यक ग्रन्थों में अनेकशः प्राप्त है परन्तु अथर्व ज्योतिष के निम्नलिखित 93 वें श्लोक के स्पष्ट वर्णन से प्रायः सभी भ्रान्तियों का निवारण हो जाता है–

आदित्यसोमौ भौमश्च तथा बुधबृहस्पती।
भर्गवः शनैश्चरश्चैव एते सप्त दिनाधिपाः।।

इतना ही नही अपितु अन्य श्लोकों में वर्णित वार प्रसंग में वारों के नामान्तर भी वर्णित हैं जिनमें– सूर्य, लोहितांग, सोमसुत, देवगुरु, भृगु, शुक्र और सूर्यसुत हैं। अतः भारतीय एवं वैदेशिक साक्ष्यों के तटस्थ भाव से अनुशीलन द्वारा वारों का उत्पत्ति स्थान भारत ही सिध्द होता है।

2.3 वारक्रम

सम्प्रति समग्र विश्व में रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार और शनिवार के क्रम से ही वार गणना प्रचलित है परन्तु इस प्रचलित वार क्रम के सिध्दान्त या आधार से सभी परिचित नहीं हैं अतः वार परिचय का ज्ञान प्राप्त करने के बाद अब आप वार क्रम के सैध्दान्तिक आधार का अध्ययन करने जा रहे हैं। वस्तुतः जिस सौरमण्डल में हम रहते हैं उस सौरमण्डल में विद्यमान ग्रह–पिण्ड ही प्रचलित वार एवं उनके सुनिश्चित क्रम के आधार हैं। जैसा कि आपने यथा स्थान पढ़ा है कि भारतीय ज्योतिष शास्त्र की गणना परम्परा में राहु, केतु के सहित सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र एवं शनि ये नव ग्रह प्रतिष्ठित है जिनका निर्धारण उद्देश्य के अनुरूप परिभाषा के द्वारा भारतीय ऋषियों नें किया है। यद्यपि आधुनिक विज्ञान के अनुसार ग्रहों की संख्या एवं संज्ञा में मतान्तर दिखाई पड़ता है परन्तु भारतीय एवं आधुनिक विज्ञान का लक्ष्य एवं परिभाषा पृथक्–पृथक् होने के कारण ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई हैं वस्तुतः भारतीय प्राचीन एवं आधुनिक दोनों ही मत अपनी दृष्टि से शुध्द है परन्तु दोनों के अनुसार ग्रहों की परिभाषा अलग–अलग होने के कारण ग्रहों की संख्या एवं संज्ञा में अन्तर है। परिभाषा के अनुसार फलादेश हेतु 9 ग्रह होते हुए भी सैध्दान्तिक दृष्टि से 7 ग्रह भारतीय ज्योतिष के आधार हैं। फलादेश वं ग्रहण साधन हेतु राहु–केतु का संज्ञा रूप में ग्रहण करते हुए भी चन्द्र एवं सूर्य के भ्रमण वृत्तों का सम्पात होने तथा पिण्डस्वरूप में नहीं होने के कारण मुख्य प्रक्रिया में इनका समावेश नहीं होता जिससे सूर्यादि 7 ग्रह ही शेष बचते हैं जिनसे वारों का प्रचलन हुआ है। इस सूर्यादि सात ग्रहों पर आधारित वारक्रम को जानने हेतु हमें सर्व प्रथम इन ग्रहों की सौरमण्डल में स्थिति का ज्ञान होना आवश्यक है। भारतीय ज्योतिष शास्त्र की खगोल ज्ञान परम्परा में दो सिध्दान्त प्रतिष्ठित है जिनमें एक भूकेन्द्रित गणना का सिध्दान्त जिसमें अपने आकर्षण शक्ति द्वारा ब्रह्माण्ड के मध्य मे स्थित स्थिर पृथ्वी के केन्द्र को केन्द्र मानकर सभी ग्रहनक्षत्रादि पिण्ड पृथ्वी के चारों ओर भ्रमण करते है इसे भूकेन्द्रिक कक्षा क्रम कहा जाता है। दूसरा सिध्दान्त सूर्य कैन्द्रिक गणना का है जिसके अन्तर्गत सभी ग्रहनक्षत्रादि पिण्डों का सूर्य केन्द्रिक भ्रमण होता है। सम्प्रति सूर्य

केन्द्रिक गणना के इस सिद्धान्त को आधुनिक कक्षा क्रम का सिद्धान्त कहा जाता है। वस्तुतः ज्योतिष शास्त्र एवं श्रुति, स्मृति आदि के सूक्ष्मानुशीलन से इसकी भी प्राचीनता ही सिद्ध होती है परन्तु ग्रहगणना की सुगमता होने के कारण सभी सिद्धान्त ग्रन्थों में केन्द्रिक गणना का ही वर्णन प्राप्त होता है। भूकेन्द्रिक ग्रह कक्षा क्रम में सभी के केन्द्र में पृथ्वी विद्यमान है, पृथ्वी के ऊपर चन्द्र, चन्द्र के ऊपर बुध, बुध के ऊपर शुक्र, शुक्र के ऊपर सूर्य, रवि के ऊपर मंगल, मंगल के ऊपर बृहस्पति, बुहस्पति के ऊपर शनि तथा उसके ऊपर नक्षत्रों की कक्षा स्थित है जैसा कि भास्कराचार्य ने भी कहा है–

भूमेः पिण्डः शशाङ्कज्ञकविरविकुजेज्यार्किनक्षत्रकक्षा।
वृत्तैर्वृत्तो वृतः सन् मृदनिलसलिलव्योमतेजोमयोऽयम्।।

इसका दिग्दर्शन नीचे के चित्र में किया जा सकता है।

भूकेन्द्रिक ग्रहकक्षा चक्र–

इस ग्रह कक्षा क्रम के आधार पर ही घटी एवं होरा भ्रमण के अनुसार वार क्रम सिध्द होते हैं। घटी भोग से वारक्रम का वर्णन केवल पंचसिध्दान्तिका के त्रैलोक्य संस्थानाध्याय में प्राप्त होता है जिसमें आचार्य ने **"उर्ध्वक्रमेण दिनपाश्च पञ्चमाः"** लिखा है। जिसके अनुसार चन्द्रमा से पंचम कक्षा में स्थित ग्रह दिवसाधिपति होता है। क्यों कि एक अहोरात्र में 60 घटी होती है अतः 60 घटी को 7 से भाग देने पर 4 शेष बचता जिससे उर्ध्व क्रम से गणना करने पर चन्द्रादि क्रम से पांचवी कक्षा में स्थित ग्रह वारपति होता है जैसे चन्द्रमा से पंचम कक्षा में स्थित मंगल, मंगल से पंचम कक्षा में बुध आदि। यह सिद्धान्त 60 घटियों में 7 ग्रहों के अनुवर्तन से सिध्द होता है। परन्तु इस मत का प्रतिपादन वराहमिहिर के अतिरिक्त किसी भी आचार्य ने नहीं किया है। क्यों कि इसमें चन्द्रादि उर्ध्व क्रम से गणना का वर्णन है। अन्य सभी सिध्दान्त ग्रन्थों में होरा भ्रमण के द्वारा उपर्युक्त केन्द्रिक कक्षाक्रम के आधार पर ही वारक्रम निष्पादित है। प्रस्तुत प्रसंग में यह भी महत्वपूर्ण है कि भूकेन्द्रिक कक्षाक्रम भारतीय ऋषियों की ही देन है। जिससे इस वारक्रम की वैज्ञानिकता सिद्ध होती है। होरा शब्द अहोरात्र से उत्पन्न होता है अधेरात्र का अर्थ सम्पूर्ण दिन (दिऩरात) है। एक अहोरात्र में 60 घटी या 24 होरा होती है, अतः 60 में 24 का भाग देने से $2\frac{1}{2}$ प्राप्त होता है। अतः $2\frac{1}{2}$ घटी एक होरा का प्रमाण होगा अतः एक अहोरात्र में ढ़ाई–ढ़ाई घटी के प्रमाण की 24 होरा होती है। चूकि 60 घटी या अहोरात्र में आधुनिक समय मापक इकाई के अनुसार 24 घंटा होता है तथा होरा भी 24 ही होती है अतः हम शब्दान्तर से 1 घण्टा = 1 होरा भी कह सकते हैं। इस विचार पद्धति में किसी भी अहोरात्र में प्रथम होरा का अधिपति ही उस वार का अधिपति होता है। अर्थात् प्रथम होरेश वारपति ग्रह होगा। तथा उसके बाद क्रमशः केन्द्रिक कक्षानुसार अधोऽधः कक्षा मे स्थित ग्रहों की होरा का क्रमशः भ्रमण होता है। जैसे रविवार में प्रथम होरा सूर्य की द्वितीय होरा सूर्य कक्षा से नीचे कक्षा में स्थित शुक्र की, तृतीय होरा शुक्र के नीचे कक्षा में स्थित बुध की, चतुर्थ होरा बुध के बाद कक्षा में स्थित चन्द्रमा की, पंचम होरा चन्द्रमा के बाद पुनः शनि की तथा षष्ठादि होराएँ इसी क्रम से सिद्ध होती है। जिसमें 24 होरा के पूर्णता के बाद पुनः जो प्रथम होरा आएगी उसके क्रम में आगत कक्षा ग्रह उस वार का स्वामी होगा तथा प्रथम होरा भी उस वार स्वामी ग्रह की ही सिद्ध होगी। निम्नलिखित होरा सारिणी द्वारा इसे स्पष्टतया जाना जा सकता है –

काल होरा सारिणी

घण्टा	श्रविवार	सेमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरूवार	शुक्रवार	शनिवार
1	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
2	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति
3	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल
4	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य
5	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र
6	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध
7	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा
8	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
9	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति
10	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल
11	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य
12	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र
13	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध
14	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा
15	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
16	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति
17	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल
18	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य
19	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र
20	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध
21	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा
22	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
23	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति
24	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल

जैसा कि सूर्यसिध्दान्तकार ने स्पष्टतया लिखा है–

होरेशः सूर्यतनयादधोऽधः क्रमसस्तथा।

जैसा कि सारिणी द्वारा स्पष्ट है कि जिस दिन जो वार होता है उस दिन की प्रथम होरा भी उसी ग्रह की होती है तथा उसके बाद नीचे क्रम की कक्षा में स्थित ग्रह की क्रमशः, इस प्रक्रिया में ग्रह 7 हैं तथा होरा 24 अतः सात ग्रहों की तीन आवृत्ति पूर्ण होने पर 21 होरा बीत जाती है तथा दिन की 3 होरा अवशिष्ट रह जो क्रमशः उसके बाद के तीन कक्षाओं में भोग करती हुई पूर्ण हो जाती है तथा पुनः चौथी कक्षा में स्थित ग्रह की प्रथम होरा आरम्भ होने से वह उस वार का अधिपति हो जाता है उस वार में भी उपर्युक्त नियम से ही क्रमशः गणना होती है। तथा उस प्रक्रिया की पुनरावृत्ति होती रहती है तथा क्रमशः सूर्यादि सात ग्रह वारों के स्वामी सिध्द हो जाते हैं। इसी सिध्दान्त को सूत्रात्मक स्वरूप प्रदान करते हुए सूर्यसिध्दान्तकार नें लिखा है कि–

मन्दादधः क्रमेण स्युश्चतुर्थाः दिवसाधिपाः।।

अर्थात् प्राचीन आचार्योक्त भूकेन्द्रिक ग्रह कक्षा क्रम में शनि से अधोऽधः अर्थात् नीचे के क्रम से गणना करने पर चतुर्थ कक्षा में स्थित ग्रह वारेश सिध्द होगा जिससे क्रमशः रविवार, चन्द्रवार, मंगलवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार तथा शनिवार का क्रम सिध्द हो जाएगा। जैसा कि आपने उपर पढ़ा है कि शनि, गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध एवं चन्द्रमा की कक्षाए क्रमशः नीचे–नीचे क्रम में स्थित हैं अतः इस क्रम से स्पष्ट है कि शनि से नीचे चौथी कक्षा में सूर्य, सूर्य से नीचे चौथी में चन्द्र, चन्द्र से नीचे चौथी कक्षा में मंगल, मंगल से नीचे क्रम में चौथी बुध, बुध से चौथी कक्षा गुरू, गुरू से चौथी शुक्र तथा पुनः शुक्र से चौथी शनि की कक्षा होगी तथा उपर्युक्त नियमानुसार क्रमशः चतुर्थ कक्षा में स्थित ग्रह वार के स्वामी सिध्द हो जाएगें। आधुनिक विज्ञान युग में सूर्य को केन्द्र मानकर गणितीय गणनाए की जा रहा हैं परन्तु वार क्रम आदि के निर्धारण में उनकी उपयुक्तता नहीं है। यद्यपि प्राचीन आचार्य भी भूकेन्द्रिक के साथ–साथ सूर्य केन्द्रिक ग्रहभगण के रहस्य से भी परिचित थे। परन्तु गणित की सुगमता के लिए आचार्यों नें अपने सिध्दान्त ग्रन्थों में भूकेन्द्रिक गणना को प्रश्रय दिया है।

2.4 वारप्रवृत्ति

अब तक आपने वारों की संख्या एवं वारक्रम के सैध्दान्तिक आधार को समझा अब आप वारप्रवृत्ति को समझेगें। वारप्रवृत्ति का अभिप्राय वार के आरम्भ काल से है अर्थात् जिस समय जिस वार का आरम्भ माना जाएगा वही समय उस वार की प्रवृत्ति का कहलाएगा। जैसा कि आप जानते हैं कि समग्र विश्व में रविवार आदि सप्त वार क्रमशः एक समान ही प्रचलित है परन्तु प्रत्येक देश ही नहीं अपितु प्रत्येक स्थानों पर इन वारों के आरम्भ का समय अलग–अलग होने से प्रत्येक वार की प्रत्येक स्थानों में प्रवृत्ति अलग–अलग मानी जाएगी। प्रस्तुत प्रसंग में वार प्रवृत्ति का अध्ययन करने के पूर्व हम वारक्रम की प्रवृत्ति अर्थात् प्रथम वार रविवार ही क्यों हुआ इसको समझते हुए वार प्रवृत्ति काल का विचार करेंगें। सृष्टि के मूल में सूर्य के विद्यमान होने के कारण सृष्टि प्रक्रिया में सर्वप्रथम सूर्य की ही उत्पत्ति हुई तथा प्रथम सूर्योदय के साथ ही कल्प, मनु, युग, वर्ष, मास, दिन आदि की प्रवृत्ति अर्थात् आरम्भ होने के कारण प्रथम वार के रूप में रविवार का ग्रहण हुआ है तथा इसके बाद वार क्रम प्रस[3]ग में उल्लिखित नियमानुसार सभी वारों का क्रम सिध्द होता है। जैसे कि भास्कराचार्य सिध्दान्त शिरोमणि में लिखा है–

लङ्कानगर्यामुदयाच्च भानोस्तस्यैव वारे प्रथमं बभूव।
मधोः सितादेर्दिनमासवर्षयुगादिकानां युगपत् प्रवृत्तिः।।

इसाई परम्परा मे सप्ताह का आरम्भ सोमवार से होता है तथा रविवार उनका अन्तिम और पवित्र दिन है क्यों कि ईश्वर ने सोमवार से आरम्भ कर शनिवार तक छः दिनों में इस सृष्टि की रचना की तथा सातवें दिन रविवार को विश्राम किया था। अतः क्रिश्चियन परम्परा में रविवार को ईश्वर का विश्राम दिन मानते हुए उसे पवित्र माना जाता है तथा सभी इसाई लोग चर्च जाते हैं। इसलिए उस दिन सबके लिए अवकाश होता है।

वारप्रवृत्ति क्रम में वार प्रवृत्ति की अनेक परम्पराएं दृष्टिगत होती है। जैसा कि सिध्दान्त शेखर कार नें कहा है–

केचिद्वारं सवितुरुदयादाहुरन्ये दिनार्धात्
भानोरर्धास्तमयसमयादुचिरे केचिदेवम्।
वारस्यादिं यवननृपतिर्दिङ्मुहूर्ते निशायां,

लाटाचार्यः कथयति पुनश्चार्धरात्रे स्वतन्त्रे।।

अर्थात् कुछ आचार्य सूर्योदय काल में, कुछ दिनार्ध्दकाल में, कुछ सूर्यास्तकाल में तो कुछ अर्धरात्रिकाल से वारप्रवृत्ति मानते हैं परन्तु मुख्यतया सौरमतावलम्बी विद्वान "लंकायामर्धरात्रिकः" सूर्य सिद्धान्त के इस वचन के अनुसार लंका में अर्धरात्रि काल से तथा ब्राह्म मतानुयायी आर्यभट्ट, भास्कराचार्य आदि लंका देश में सूर्योदय काल से वारप्रवृत्ति स्वीकार करते है। जैसा कि "लंकानगर्मुदयाच्च भानोः" का प्रतिपादन करते हुए भास्कराचार्य ने स्पष्ट वर्णन भी किया है। आचार्य मुनीश्वर नें अपने सिद्धान्त सार्वभौम नामक ग्रन्थ में लिखा है कि चौत्र शुक्ल प्रतिपदा रविवार के दिन यमकोटि नगर के सूर्योदय तथा लंका के अर्धरात्रि काल में वारप्रवृत्ति हुई। वस्तुतः सैद्धान्तिक दृष्टि से स्थान भेद से वारप्रवृत्ति का काल भेद स्वतः ही सिध्द हो जाता है जैसा कि मुनीश्वर ने अपने ग्रन्थ में यमकोटि के सूर्योदय एवं लंका के अर्धरात्रि काल में एक साथ प्रवृत्ति कहा है। क्यों कि इस भूपृष्ठ पर स्थिति को निर्धारण करने हेतु लंका, यमकोटि, रोमक पत्तन, सिध्दपुर, सुमेरु एवं बड़वानल (कुमेरु) नामक छः स्थान परस्पर 90 अंश के अन्तर से स्थित है जिनमें लंकादेश से 90 अंश पूर्व में यमकोटि होने कारण जिस समय लंका में मध्यरात्रि काल होगा उस समय यमकोटि में सूर्योदय काल सिध्दान्तानुसार सिध्द होगा।सूर्यसिध्दान्तकार के अर्धरात्रि मत का अनुसरण करते हुए मुनीश्वर नें अहर्गण साधन के अवमत्याग प्रसंग में भी "तिथ्यन्तरात्र्यर्ध्दकयोस्तु मध्ये सदैव तिष्ठत्यवमावशेषम" कहते हुए अर्धरात्रि काल को ही दिन का आरम्भ मानते हुए गणितीय प्रक्रिया को पूर्ण किया है। सैध्दान्तिक दृष्टि से एक ही समय में स्थान भेद से सूर्योदय एवं अर्धरात्रि काल में वार प्रवृत्ति सिध्द होते हुए भी किसी एक स्थान हेतु अर्धरात्रि एवं सूर्योदय में से किस काल मे वारप्रवृत्ति स्वीकार किया जाय। इस प्रसंग में यह ध्यान देने योग्य विषय है कि शास्त्र वचनानुसार सूतक काल का निर्धारण, दिन, मास, वर्ष के पति, ग्रहपति इत्यादि का निर्धारण तथा मानवजीवनोपयोगी सभी प्रमुख व्यवहार सावन दिन से संचालित होते हैं तथा सावन दिन एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक होता है जिससे वार की प्रवृत्ति भी सूर्योदय काल से ही उपयुक्त प्रतीत हो रही है परन्तु सूर्यसिद्धान्त मत के अनुयायी सूर्योपदिष्ट सूर्यसिद्धान्त के वचन को भगद्वाक्य मानते हुए श्रद्धापूर्वक अर्धरात्रि से ही वारप्रवृत्ति स्वीकार करते हैं यह भी ध्यातव्य है कि सूर्योपदिष्ट सूर्यसिद्धान्त कि रचना मयासुर ने की है, जिसका जामाता रावण लंका एवं राक्षस वंश का अधिपति था तथा राक्षसों का कर्म व्यवहार भी अर्धरात्रि से ही आरम्भ होता है। इसीलिए आग्रह पूर्वक मयासुर ने भी अर्धरात्रि काल से ही वार प्रवृत्ति का प्रतिपादन किया है। अर्धरात्रि काल से वारप्रवृत्ति मानने में गणित की सरलता भी दृष्टिगत होती है क्योंकि लंकादेश के याम्योत्तरवृत्त में स्थित सभी स्थानों पर एक ही साथ एक ही काल में अर्धरात्रि होने से एक साथ ही उन सभी स्थलों पर वारप्रवृत्ति होगी तथा उनके अतिरिक्त अन्य स्थलों पर वारप्रवृत्ति जानने के लिए लंकादेश के वारप्रवृत्ति काल में धन–ऋण संस्कार करने से स्थानीय वारप्रवृत्ति का काल सिद्ध होता है। परन्तु सूर्योदय काल में वारप्रवृत्ति स्वीकार करने से रेखादेशों में भी क्रान्ति एवं अक्षांश के भेद से सूर्योदय काल अलग–अलग सिध्द होकर वारप्रवृत्ति काल भी पृथक्–पृथक् होगा तथा रेखादेश से अतिरिक्त स्थानों पर तो पथक् होगा ही। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि उपर्युक्त कारणों से ही अर्धरात्रि काल से वारप्रवृत्ति का आधार बना होगा परन्तु सैद्धान्तिक एवं आगम प्रमाण से सूर्योदय काल से ही वारप्रवृत्ति युक्ति संगत प्रतीत हो रही है। जैसा कि आचार्यों नें कहा है–

वारप्रवृत्तिं मुनयो वदन्ति सूर्योदयात् रावणराजधान्याम्।

सभी मतों की समीक्षा करते हुए आचार्य श्रीपति नें सिध्दान्तशेखर ग्रन्थ में सूर्योदय काल से ही वारप्रवृत्ति का निरूपण किया है। भास्कराचार्य ने भी इसका वर्णन करते हुए स्पष्ट लिखा है कि–

अर्कोदयादूर्ध्वमधश्च ताभिः प्राच्यां प्रतीच्यां हि दिनप्रवृत्तिः।
उर्ध्वं तथाधश्चरनाडिकाभी रवावुदग्दक्षिणगोलयाते।।

अर्थात् लंकादेश में सूर्योदय काल में वारप्रवृत्ति होती है तथा लंकादेश के याम्योत्तरवृत्त (रेखादेश) से पूर्व एवं पश्चिम के देशों में चरखण्ड एवं देशान्तर तुल्य घटी–पलादि के अन्तर से वारप्रवृत्ति होती है। चरखण्ड एवं देशान्तर का ज्ञान आपने कुण्डली निर्माण एवं भूगोल ज्ञान कि प्रक्रिया में प्राप्त किया होगा या प्राप्त करेंगे। लंका देश से स्वस्थान पूर्व में होने पर लंका देश की अपेक्षा स्पष्ट देशान्तर काल तुल्य बाद में तथा लंकादेश से अपने स्थान के पश्चिम होने पर लंका देश की अपेक्षा स्पष्ट देशान्तर काल तुल्य पहले ही वारप्रवृत्ति हो जाएगी।

सावनमान से ही दिन सम्बन्धी कार्य व्यापार होने एवं धार्मिक दृष्टि से सूर्योदय कालानन्तर ही यागादि कर्म सम्पादित होने के उपयुक्त सूर्योदय कालिक वार प्रवृत्ति की बहुशः स्वीकृति के बाद भी सौरमतानुयायी वैष्णव सम्प्रदाय के कुछ लोग अर्धरात्रि काल से ही वारप्रवृत्ति मानते हुए व्रतादि का निर्धारण करते हैं। धर्मशास्त्र के ग्रन्थों में इसका विस्तृत विवरण प्राप्त हो जाएगा। वर्तमान में आधुनिक गणना पध्दति में भी सूर्यसिद्धान्तीय मत का अनुसरण करते हुए अर्धरात्रि से ही वारप्रवृत्ति मानने का प्रचलन है इसीलिए अंग्रेजी महीने का दिनाङ्क रात्रि के 12 बजे बदल जाता है तथा दूसरे दिन का आरम्भ होकर अगला दिनाङ्क लिखा जाने लगता है। जबकि दिन व्यवहार में सावन दिन ग्रहण करने का वर्णन है जिसका आरम्भ सूर्योदय काल से होता है। सम्प्रति कम्प्यूटर द्वारा बनने वाली कुण्डलियों में भी रात्रि 12 बजे के बाद दिन का नाम बदलकर दिखता है। इस अध्ययन से यह तथ्य दृष्टिगत होता है कि गणित की सरलता के कारण अर्धरात्रि कालिक वारप्रवृत्ति का प्रचलन बदलता गया है परन्तु आज भी भरतीय ज्योतिषीय परम्परा में औदयिक वारप्रवृत्ति ही व्यवहार में लायी जाती है तथा यह भारतीय ज्ञान गौरव को प्रदर्शित करती है। प्राचीन काल में व्यवस्था संचालन हेतु लंका (शून्य अक्षांश एवं रेखांश वाले) देश को केन्द्र मानकर वहीं से वार प्रवृत्ति स्वीकार कर उससे पूर्व या पश्चिम में धन–ऋण की व्यवस्था द्वारा वारप्रवृत्ति का वर्णन किया गया है। क्यों कि कार्य व्यवहार हेतु किसी एक स्थान को नियतकर वहीं से समग्र गणितीय व्यवस्थाएं संचालित होती हैं। सम्प्रति वैश्विक व्यवस्था संचालन हेतु विश्वसमुदाय द्वारा इंगलैण्ड देश में स्थित ग्रीनविच को केन्द्र मानकर काल व्यवस्था संचालित होती है।

2.5 वारों की शुभत्व और अशुभत्व आदि संज्ञाएँ

सैद्धान्तिक दृष्टि से सभी ग्रह एवं उनसे सम्बन्धित वार स्वगत विशिष्टताओं के कारण महत्वपूर्ण हैं उनकी उपयोगिता सर्वत्र बनी रहती है इनमें कोई शुभ या अशुभ नहीं होता परन्तु फलित ज्योतिष के क्रम में इनके शुभाशुभत्व को आचार्यों नें निरूपित किया है–

रविवार– फलादेश परम्परा में सूर्य के पापग्रह होने के कारण यह पापवार भी है, इसकी स्थिर एवं ध्रुव संज्ञा होती है तथा यह पुरुष वार होता है।

सोमवार– सोमवार शुभ, स्त्री संज्ञक तथा चर और चल संज्ञक वार है।

मंगलवार– यह पुरुष संज्ञक, उग्र एवं क्रूर संज्ञक तथा पाप संज्ञक वार है।

बुधवार– यह नपुंसक, साधारण एवं मिश्र तथा मिश्र प्रवृत्ति (पाप एवं शुभ दोनो) संज्ञक होता है।

गुरुवार– यह पुरुष संज्ञक, शुभ तथा क्षिप्र एवं लघु संज्ञक वार है।

शुक्रवार– यह स्त्री संज्ञक, शुभ तथा मृदु एवं मैत्र संज्ञक वार है।

शनिवार– यह नपुंसक संज्ञक, पाप तथा तीक्ष्ण एवं दारुण संज्ञक वार है।

ज्योतिष शास्त्र की फलादेश एवं मुहूर्त्त प्रक्रिया में प्रत्येक ग्रहों की प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुसार उनका शुभाशुभत्व निरूपित किया गया है तथा उसी के अनुसार सम्बन्धित वारों में कार्यों की शुभता एवं निषेध का वर्णन भी प्राप्त होता है क्यों कि इससे कार्य की सिध्दि प्रभावित होती है। अतः जिन वारों में जो कार्य वर्णित हैं उन्हें ही करना श्रेयष्कर होता है तथा जो कार्य दिन सम्बन्ध से वर्जित हैं उन कार्यों को उस दिन में करने से वह कार्य प्रतिकूल रूप मे प्रभावित होता है। दिनों के ग्राह्य एवं वर्जित कार्य का वर्णन आप मुहूर्त्त ग्रन्थों से प्राप्त कर सकते है। वैसे तो आप जानते है कि ज्योतिष शास्त्र की रचना स्वयं ब्रह्मा जी ने मनुष्यों के सुख–शान्ति–समृध्दि पूर्वक परमपुरुषार्थ की प्राप्ति में सहायक धर्मानुकूल व्यापार सम्पादन के लिए किया था अतः यह सभी वेदाङ्गों में महत्वपूर्ण एवं समाज से सम्बध्द शास्त्र है। समाज मे यदा–कदा ऐसी भी स्थितियां उत्पन्न हो जाती है जब किसी कार्य का होना आवश्यक होता है परन्तु उस के अनुरूप मुहूर्त्त का अभाव होता है इसीलिए हमारे आचार्यों ने ऐसी परिस्थितियों के समाधान हेतु परिहार नियम बनाए हैं जिनके अनुसार हम वर्जित दिनों में भी अति आवश्यक कार्यों को करते हुए अशुभता एवं शास्त्र की अवज्ञा से बच सकते हैं। दिनों के क्रम में काल होरा अत्यन्त लाभकारी सिध्द होती है। जैसे किसी को शनिवार के दिन नौकरी आरम्भ करना आवश्यक है परन्तु पापग्रह का वार होने से इस दिन कार्यारम्भ से भविष्य में अनेक विषमताएं उपस्थित हो सकती है अतः ऐसी स्थिति में शनिवार के दिन सूर्योदय के ठीक एक घण्टे बाद गुरु की होरा आयेगी जो एक घण्टा तक रहेगी तथा चार घण्टे बाद शुक्र एवं पांचवे घण्टे में बुध तथा सातवें घण्टे में चन्द्रमा की होरा आएगी। अतः वह व्यक्ति गुरु, शुक्र, बुध या चन्द्र की होरा में भी सेवा आरम्भ कर सकता है। ऐसे समय में अर्थात् अभीष्टवार की काल होरा में आरम्भ किया हुआ कार्य भी सफलता को प्राप्त होता अतः इस प्रक्रिया को अवश्य ही व्यवहार में लाना चाहिए। यात्रादि दिक्शूल विचार में भी यह अत्यन्त उपयोगी सिध्द होती है। वार क्रम निर्धारण प्रस्ंग में प्रस्तुत होरा सारिणी द्वारा सरलतया काल होरा का ज्ञान किया जा सकता है।

अतः कभी कभी किसी भी वार में यदि किसी अन्य वार विशेष का काम करना पड़ जाय तो ऐसी अवस्था में काल होरा का आश्रय लेकर उस कार्य को सम्पादित किया जा सकता है। प्रत्येक वार में सात वारों की काल होरा भ्रमण करती रहती हैं। ऐसी स्थिति में यदि व्यक्ति को ज्ञान हो तो किसी वार विशेष में भी वह किसी विशिष्टवार का शुभ या अशुभ कर्म कर सकता है जैसा कि शास्त्रादेश है–

तस्य ग्रहस्य वारे यत्किंचित् कर्मप्रकीर्तितम्।
तत् तस्य कालहोरायां सर्वमेव विधीयते।।(बृहद्दैवज्ञरंजनम्)

मुहूर्त्तचिन्तामणि ग्रन्थ के पीयूषधारा टीका में भी श्री गोविन्द दैवज्ञ ने भी स्पष्टतया कहा है कि–

यस्य खेटस्य यत्कर्म वारे प्रोक्तं विधीयते।
ग्रहस्य क्षणवारेऽपि तस्य तत्कर्म सर्वदा ।।(मु0चि0पी0धा0५४)

2.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि विश्व के सभी देशों में एक जैसे क्रम में स्थित रविवारादि सात वारों का प्रचलन है। जिनका नाम भाषा भेद

से अलग–अलग हो सकता है। आरम्भ काल में वारों को लेकर अनेक विषमताएं थीं परन्तु सम्प्रति सर्वत्र एकरूपता दिखाई देती है। इन वारों का नामकरण भारतीय प्राचीन आचार्यों द्वारा प्रतिपादित भूकेन्द्रिक कक्षा क्रम के अनुसार ही हुआ है जिसमें शनि से नीचे के क्रम से चौथी कक्षा में स्थित ग्रह वार का स्वामी होता है। सृष्टि काल में लंकादेश में प्रथम सूर्य दर्शन के कारण प्रथमवार के रूप में रविवार को स्वीकार किया गया है। इसाई परम्परा में प्रथमवार सोमवार होता है। परन्तु इसका कोई प्रामाणिक आधार प्राप्त नहीं होता है। सूर्योदय एवं अर्धरात्रि काल से वार प्रवृत्ति की परम्परा भारतीय ज्योतिष शास्त्र में वर्णित है परन्तु धार्मिक एवं व्यवहारिक उपयोगिता में सूर्योदय कालिक वारप्रवृत्ति का ही अधिक महत्व है। गणना की सरलता के कारण अर्धरात्रि काल से वारप्रवृत्ति की परम्परा का सम्प्रति आधुनिक प्रयोग दिखाई दे रहा है। पाश्चात्य वैदेशिक एवं कुछ भारतीय इतिहासकार भी वारों की उत्पत्ति का स्थान भारत से अन्यत्र मानते हैं परन्तु वेद–वेदाङ्गों के सूक्ष्म अनुशीलन से भारत में ही वारों की उत्पत्ति सिध्द होती है।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

राहु,केतु – सूर्य एवं चन्द्रमा के भ्रमण वृत्तों के सम्पात जिन्हें ग्रह के रूप में पढ़ा गया है।

सम्पात – दो वृत्तों का स्पर्श स्थान।

अहोरात्र – दिन,रात्रि का समग्र मान।

होरा – 1 घण्टा = 2 घटी = 30 पल राशि के आधे को भी होरा कहते हैं

देशान्तर – शून्य अंक्षांश के याम्योत्तर वृत्त अर्थात् रेखादेश एवं स्वदेश का पूर्वा अन्तर।

चरान्तर – विषवत् रेखा से उत्तर या दक्षिण का अन्तर।

स्पष्ट देशान्तर – देशान्तर मे चरान्तर को नियमानुसार जोड़ने या घटाने से स्पष्ट देशान्तर होता है।

लंकादेश – जिस स्थान का अक्षांश शून्य हो।

वारप्रवृत्ति – दिन के आरम्भ होने का काल।

ग्रहकक्षा – जिस पथ में ग्रहों का भ्रमण होता है उसे ग्रह कक्षा कहते हैं।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. ग्रहलाघवम्
2. पंचांग साधन
3. भारतीय ज्योतीष का इतिहास
4. भारतीय ज्योतिष
5. सूर्यसिद्धान्त
6. सिद्धान्तशिरोमणि
7. ज्योतिष सिद्धान्त मंजूषा
8. मुहर्तनिन्तामणि

2.9 सहायक पाठ्यसामग्री

1. केशवीय जातकपद्धति
2. ज्योतिष सर्वस्व
3. भारतीय कुण्डयली विज्ञान
4. भारतीय ज्योतिष
5. गोलपरिभाषा (डॉ. हंसधर झा)

2.10 बोध प्रश्न

1. वार किसे कहते है तथा कितने होते है।
2. भारतीय ऋषियों के अनुसार वार–क्रम का विस्तृत वर्णन कीजिये।
3. वारों की स्त्री, पुरुष, नपुंसकादि संज्ञा तथा उनके शुभाशुभ का विवेचन कीजिये।
4. वारों के क्रम को होरा भ्रमण आधार पर सिद्ध करिए।
5. वरप्रत्ति काल का सुचित विवेचन करिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY